Research Paper Social Science

# श्रीमदभागवतमहापुराण के संदर्भ में नारी एवं उसके अधिकार ; एक विस्तृत अध्ययन

# (Shreemad Bhagavat Mahapuran Ke Sandarbh Me Naari Evam Uske Adhikar- Ek Vistrut Adhyayan)

**Dr Sona Dixit** — Assistant Professor, Dept. of Foundations of Education, Dayal-bagh Educational Institute,(Deemed University),Dayalbagh, Agra.

**Indu Sharma** — Research scholar, Dept. Of Sanskrit, Dayalbagh Educational Institute, (Deemed University),Dayalbagh, Agra

**KEYWORDS**

भारतीय समाज में पुरुष एवं स्त्री को जीवन रूपी रथ के दो चक्र माना है। जिस प्रकार किसी एक के बिना रथ की गति असम्भव है उसी प्रकार जीवन में स्त्री और पुरुष दोनों का समान रूप से महत्व है। नर–नारी का सम्बन्ध शाश्वत है। नारी समाज की आधारशिला है। यदि पुरुष के बिना समाज गतिहीन है तो नारी के बिना स्थिति हीन। स्त्री पुरुष में स्त्री पुरुष की साध्य की साधिका है– नरस्य स्त्रीव साध्यसाधिका। (यजु. भा.– 11/10)

पुराण हमारी पुरातन भारतीय संस्कृति और सभ्यता के कोषागार ग्रन्थ है; लौकिक तथा पारलौकिक जीवनदर्शन के अजस्त्र आदर्श, भारतीय शास्त्रों का मनोरम सार सर्वस्व; वेद, उपनिषद, आख्यांक, धर्मसूत्र आदि ग्रन्थ जिस अर्थ को सूत्ररूप से प्रस्तुत करते है उन्हीं को अश्टादष महा पुराण सरलतम भाषा में उदाहरण प्रत्युदाहरण के द्वारा परस्पर मनोरमरूप में अध्ययन कर्ता के समक्ष प्रस्तुत करते है।

श्रीमदभागवतमहापुराण अश्टादष महापुराणों में व संस्कृत वाङमय की सर्वोत्कृश्ट परिणति है, जिसके लक्ष्य साधन और षैली महान तथा विलक्षण है एवं इसका स्वरूप भी अत्यन्त गम्भीर, माधुर्य तथा प्रसादपूर्ण है, जिसके रचियिता अगाध बोध महामुनि के मुखारबिन्द संस्पृश्ट अतएव परमान्दमय अमृत द्रव, संयुक्त, संवेदक, तापत्रयोन्मूलक श्रीमदभागवतमहापुराण, वेदषाखा विभाजक, महाभारत तथा ब्रहमसूत्र के रचियिता हरिज्ञानावतार सत्यवतीनन्दन परावरज्ञ पराषरात्मज महर्शि कृश्णद्वैपायन व्यास की अस. मोर्ध्व रचना है।

किसी भी समाज का उत्कर्ष उस समाज में स्त्रियों के सम्मान पर आधारित होता है। इसी तथ्य को ध्यान में रखते हुए पुराणों ने स्त्रियों के प्रति सम्मान का भाव रख पौराणिक संस्कृति को समृद्धिशाली बनाया ;याज्ञवल्क्य स्मृति में उल्लेखित है कि– गुरु, आचार्य, उपाध्याय और ऋत्विज क्रमानुसार पूजनीय` है, परन्तु माता इन सभी में सबसे अधिक पूजनीय होती है–

एकदेशमुध्याय ऋत्विग्यज्ञकृ दुच्यते ।
एते मान्या यथा पूर्वभेभ्यो माता गरियसी (या.अध्याय. 2.श 34.35.पृ०–16)

सृष्टि का प्रारम्भ नारी एवं पुरुष दोनों के पारस्परिक गुणों के आधार पर ही माना गया है। एक के अभाव में दूसरे की स्वतंत्र कल्पना करना असम्भव है। समस्त पौराणिक साहित्य नारी के विविध रंगों में रंगा हुआ है। नारी सदा पुरुष की सफलता में सहायिका रही है। जीवन की ज्योति शाक्ति एवं प्रेरणा की स्त्रोत नारी ने अपने सहज–गुणों से सर्वदा पुरुष की सहज–चेतना को प्रदीप्त किया है।

पौराणिक–साहित्य की नारी ने अपने व्यक्तित्व से समाज में आद्याशक्ति के स्वरूप को बनाये रखा; महिला शब्द का वास्तविक अर्थ ही महान शक्तिशाली है। इसी का प्रत्यक्ष प्रमाण है कि सृष्टि के उत्पत्ति प्रसंग में नारी प्रकृति के स्पन्दन का आधार बनती है, पुरुष ब्रह्म तो सदा प्रक्रतिस्थ होकर प्रकृतिजन्य गुणों का उपभोग करता है। धार्मिक दृष्टि से राजनीतिज्ञ एवं साध्वी के रूप में वैदिक–नारी सदा युगदृष्टा रही है। राजनीति को आध्यात्मिक रूप देने का श्रेय भी वैदिक–नारी को ही है। व्यक्तिगत नैतिकता को नारी ने सदा सार्वजनिक रूप से सिद्ध करने की साधना की है।

विवाह का अधिकार :–
वैदिक काल से ही भारतीय संस्कृति में विवाह को एक पवित्र संस्कार माना गया है। विवाह गृहस्थ जीवन का प्रवेश द्वार है। विवाह भावी दम्पत्ति को आत्मा, मन, प्राण, शरीर को आध्यात्मिक सम्बन्ध द्वारा सुदृढ़ करने का एक चिरस्थायी प्रयत्न था। ऋग्वेद में स्पष्ट कहा गया है कि विवाह सत्य और कर्त्तव्य पर प्रतिष्ठित है – ऋतस्य योनौ सुकृतस्य लोके (ऋ० 10/85/25)।

पुराणकालीन समाज ने वैदिक परम्परा का निर्वाह करते हुए विवाह को एक पवित्र धार्मिक संस्कार मान स्त्री की इच्छा को सर्वोपरि रखा; विवाह को शब्द और अर्थ के समान अविभाज्य मानने वाले पौराणिक समाज ने विवाह के अवसर पर नारी की इच्छा को सर्वोपरि रखा; तत्कालीन समाज में विवाह एक धार्मिक संस्कार था। कन्या का पिता इस संस्कार द्वारा वर को अधिकार नहीं अपितु कर्त्तव्य सौपता था। वर इस कन्यादान को सहर्ष स्वीकार करता था। विवाह के अवसर पर कन्या व माता की अनुमति आवश्यक थी–

सोऽनु ज्ञात्वा व्यवसितं महिष्या दुहितुः स्चकाटम्।
तस्मै गुणगणाढयाय ददौ तुल्यां प्रहर्षितः। (श्रीमद.–स्क.3.अ.222. श्.पृ.269)

सु– समाज की संरचयित्री नारी की सौम्यता, सौष्ठव का सौरभ सम्पूर्ण समाज को सुरभित करता था। तत्कालीन समाज में स्त्री को स्वतन्त्रतापूर्वक वर चुनने का अधिकार प्राप्त था– शुक्राचार्य की पुत्री देवयानी ने क्षत्रिय राजा यथाति के साथ विवाह किया था–

तं वीरमाहौशनसी प्रेमनिर्भरया गिरा।
राजस्त्वयतं ग्रहीतो मे पणिः परपुञ्जय।। (स्क.–9 ।अ.18 ।पृ०73)

शिक्षा का अधिकार : –
श्रीमदभागवतमहापुराण के अनुशीलन से यह ज्ञात होता है कि तत्कालीन समाज में नारी सुरक्षित ही नही वरन् स्वरक्षिता भी थी, ऋषि महार्षियो के दृष्टि में शिक्षा व्यक्तित्व के सर्वागीण विकास का हेतु है, मनुष्य की अंर्तनिहित प्रतिभा को प्रबुद्ध कर उसके दोषों और विकारों का परिमार्जन कर पूर्णता प्रदान करना ही शिक्षा का उद्देश्य था। तत्कालीन शिक्षा केवल भौतिक उपलब्धियों तक ही सीमित न रहकर आत्मचिन्तन का ध्येय निर्धारित करती थी। शिक्षा की उपयोगिता के विषय में मनुस्मृति में उल्लेख है कि–शरीर, मन, बुद्धि अपने ज्ञान–विज्ञान और बुद्धि कौशल के कारण ही मानव सृष्टि का सर्वश्रेष्ठ प्राणी है–

उहती देवता ह्वोषा नररूपेण तिष्ठति। (मनु० 7/8 )
व्यक्तित्व के इन पक्षों का समग्र विकास कर ज्ञान शक्ति को प्रकाशित करना ही पुराण कालीन ऋषि महर्षियों का उद्देश्य था इसी उद्देश्य प्रतिपूर्ति हेतु पुराण कालीन ऋषि महर्षियों ने नारी को शिक्षा को अधिकार प्रदान किया; तत्कालीन नारी विभिन्न विधाओं में पारंगत होती थी। बाणासुर की पुत्री की सखि योगसिद्धि नामक विधा में पारंगत थी–

चित्रलेखा तमाज्ञाय पौत्रं कृष्णस्य योगिनी।
ययौ विहायसा राजन् द्वारकां कृष्ण पालिताम्।। (श्रीमद. ।स्क.10 ।अ.62 ।2.22 ।पृ. 999)

तत्कालीन सामाजिक व्यवस्था के अनुसार नारी को भी अपना सवीण विकास करने का पूर्ण अधिकार प्राप्त था, जो शिक्षा के अभाव में असम्भव है।

विद्या की अधिष्ठात्री देवी, सरस्वती के मन्दिर में प्रवेश पाने का व ज्ञान प्राप्त करने का अधिकार स्त्री व पुरुष दोनों को समान रूप से था स्त्रियां ज्ञान सम्पन्न थी, विद्या अभ्यास से विघ्नभूत कतिपय वे लोग थे जो आलसी, उदण्ड, उच्छृंखला असूया अवगुणों से ग्रसित थे। इसके अतिरिक्त लिंगभेद की भावना से मुक्त प्रत्येक व्यक्ति मां सरस्वती की संहिता के सरोवर में मज्जन करने के लिये स्वतंत्र था। अथर्व. में उल्लेख मिलता– कन्या की शिक्षा भी बालकों की भांति होती थी, शिक्षा का प्रारम्भ होने से पहले कन्या का उपनयन संस्कार किया जाता था, इस संस्कार के बाद ही बालक या बालिका को वैदिक संहिताओं के अध्ययन का अधिकारी माना जाता था। गुरूओं के आश्रम में रहकर बालकों की भाँति कन्याएँ भी ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करती हुई यज्ञोपवीत, मौञजी, मेरवला और वल्कल वस्त्र धारण करती थी–

पुराकल्पो कुमारीणां मौञजीवन्धन मिष्यते।
अध्यापनं च वेदानां सावित्रीवचनं तथा।। (अथर्व. 11/9/16)

याज्ञिक अधिकार :–

भारतीय जीवन यज्ञीय भावना से ओतप्रोत रहा है, श्रीमदभागवतमहापुराण में यज्ञ का महत्त्वपूर्ण स्थान था। तत्कालीन समाज में नारी को याज्ञिक अधिकार प्राप्त थे। भागवतपुराण में यज्ञ के दो प्रमुख रूप दृष्टिगोचर होते हैं। प्रकृति यज्ञ और विकृति यज्ञ।

प्रकृतिविकृतिभिरनुसवनं चातुहेत्रिविधिना। – (भा. 5/7/5)
अग्निहोत्र नामक यज्ञ पत्नी के साथ होने पर ही पूर्ण माना जाता था। गृहस्थ के द्वारा सम्पन्न किये जाने वाले पंच महायज्ञों के अन्तर्गत प्रातः एवं सायंकालीन यज्ञ अग्निहोत्र यज्ञ कहलाते थे; पति–पत्नी मिलकर दोनों इन यज्ञ को सम्पन्न करते थे–

ईजे च भगवन्त यज्ञकृतुरुपं कृतुभिरूच्चावचैः श्रद्धया।

ऽऽहृताग्निहोत्र दर्शपूर्णमासचातुर्मास्यपशु सोमानां प्रकृतिविकृति भिरनुसंवगं चातुहोत्र विधिना।। ( भाग.5.7.5, 4.7.41.)

परमपिता परमेश्वर की आराधना करने का अधिकर एकमात्र पुरूषवर्ग को ही नही स्त्रियों को भी था। विवाहित पुरूष अकेला आराधना नहीं कर सकता था इसलिए राजा अम्बरीष ने अपनी पत्नी के साथ मिलकर भगवान श्रीकृष्ण की आराधना का नियम ग्रहण किया–

आरिराधायिषुः कृष्ण महिष्या तुल्यशील्या।
युक्तः सावल्सर वीरा दधारं द्वादशीव्रतय्।। (श्रीमद./9/4/29/15)

समाजिक अधिकारः–
श्रीमद० पुराण का अनुशीलन करने पर ज्ञात होता है कि – उस समाज सें नारी को समाज में महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त था। निर्वाह हेतु नारी प्रमुख पारिवारिक कार्य करती थी जो मातृ एवं सहचरी के रूप में सम्पन्न होते थे। इन कार्यो के अतिरिक्त नारी को पूर्ण अधिकार प्राप्त था कि वह अपने आत्म–विकास के पथ पर अग्रसर होकर सांस्कृतिक विकास के माध्यम से समाज की सेवा में अपना सहयोग प्रदान करें। पौ. राणिक समाज ने नारी को उत्कृष्टता प्रदान करते हुए समाज में समान अधिकार से सम्पन्न किया। इसलिए जब पाण्डव श्रीकृष्ण के साथ जलांजलि के इच्छुक स्वर्गीय स्वजनों के तर्पण के लिए जाते हैं तब स्त्रियों को भी अपने साथ ले जाते हैं –

अथ ते सम्परेतानां स्वानामुदक मिच्छताम्।
दातुं सकृष्णा गगांयां पुरस्कृतयः ययुः स्त्रियः।।(श्रीमद०/1/8/72)

पुराणकालीन समाज में नारी–नर की सहधर्मिणी थी, जो परिवार की समस्त व्यवस्थ. ाओं पर नियंत्रण रखती थी। नारी को साहित्य एवं ललित कलाओं की शिक्षा भी दी जाती थी। जिसका उद्देश्य धनोपार्जन नही था परन्तु आवश्यकता पड़ने पर धनार्जित करने पर प्रतिबन्ध भी नहीं था श्रीमद. में त्रिव्रका वर्णन है, जहाँ पर वह श्रीकृष्ण से संवाद करते हुए अपने परिचय में कहती है कि वह महाराज कंस के यहाँ चन्दन व चन्दन से मिश्रित विभिन्न प्रकार के लेपों का काम करती है –

दास्यस्म्यहं सुन्दर कंससम्मता त्रिवक्रनामा ह्यनुपद्रे कर्मणि।
मद्ववित भोजपते रतिप्रियं, विना युवां कोऽन्यतमस्तदर्हति।। (श्रीमद०/10/42/329)

न्यायकर्त्री के रूप में :–
पुराण कालीन समाज में नारी को न्याय करने या अंतिम निर्णय लेना का व युद्ध के समय पुरूष के युद्धांगण में साथ जाना का अधिकार प्राप्त था–

कौरव व पाडवों के युद्ध में अश्वत्थामा ने द्रौपदी के सोये हुए पुत्र का वध कर दिया था। इस निन्दनीय अपराध से क्रोधित हो अर्जुन व श्रीकृष्ण ने अश्वत्थामा को मृत्युदण्ड देना का निश्चय किया परन्तु वैदिक ज्ञान से सम्पन्न द्रोपदी ने अर्जुन को ब्राह्मण व गुरू–पुत्र अश्वत्थात्मा के वध करने से रोकते हुए कहा कि– जिस प्रकार मैं पुत्र–वियोग से तड़प रही हूँ मैं नहीं चाहती कि गुरू–माता भी इस दुःख से व्यतीत हो –

उवाच चासहन्त्यस्य बन्धनानयतं सती।
मुच्चतां मुच्चतामेष ब्राह्मणों नितरा गुरुः।।(श्रीमद०/1/7/43/71)

वहाँ पर पुरुष के लिए स्त्री पथ–प्रदर्शिका शुद्ध–हदृया नैतिकता की आधारशिला के रूप में सम्मानित थी।

उपसंहार :–
श्रीमदभागवतमहापुराण में नारी की स्थिति पर प्रकाश डालने पर ज्ञात होता है कि उस समय कन्या मां की गोद में स्वतन्त्रतापूर्वक, जीवन–यापन करती हुई अपने जीवन– साथी को चुनने में पूर्ण स्वतन्त्र थी, कन्या के विवाह के अवसर पर माता की आज्ञा व सहमति अनिवार्य थी, इस युग में पर्दा–प्रथा नहीं थी। नारी को नर के समान धार्मिक, आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक आदि अधिकार प्राप्त थे। नारी के बिना नर को यज्ञ न करने की भावना के पीछे भी नारी सम्मान की भावना ही तत्कालीन पुरुष के हदृय में अन्तर्निहित थी; नारी को समस्त अधिकार प्रदान करने वाला समाज व पुरुष वर्ग निःसन्देह स्त्रीवर्ग के लिए श्रद्धा एवं आदर का भाव रखता था। तत्कालीन समाज में नारी को जो सम्मान मिला, वह उसकी साधना, सत्यता, सहनशीलता, सौम्यता सौष्ठवता इत्यादि सहजगुणों का ही सुफल है। पौराणिक सा. हत्य में पावनता की आगार नारी की अपने पति के प्रति अटल भक्ति परिलक्षित होती है।

अथर्व वेद के अनुसार पत्नी ही घर है, वह घर की साम्राज्ञी है और इसे ही घर के सभी प्राणियों पर शासन करने का पूर्ण अधिकार है (अथर्व०–14/14) समाज के प्रति इस समादर की भावना को आत्मसात कर श्रीमदभागवतमहापुराण ने नारी समाज को उत्कृष्टता प्रदान की है।

श्रीमदभागवतपुराण में पुरुषवर्ग निःसन्देह स्त्री वर्ग के लिये श्रद्धा व आदार का भाव रखता हुआ अपने कर्त्तव्य व आचार–निष्ठा का पालन करता था। इसलिए पौराणिक काल में नारी समस्त अधिकारों से विभूषित थी। आधुनिक समय में महिलाओं के उत्थान व सुरक्षा के लिये विभिन्न कानून बनाये गये हैं। भारतीय संविधान के अंतर्गत महिलाओं के अधिकारों की रक्षा व गरिमामय जीवन के लिये मौलिक अधिकारों की व्यवस्था की गयी है। अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर मानव–अधिकारों की सार्वभौम–घोषणा में नारी के जीवन व आत्म सम्मान से संबंधित सभी अधिकारों को सुरक्षित रखा गया है।

आधुनिक युग में यह अपरिहार्य कार्य है कि प्राचीन काल के विभिन्न तथ्यों का पुनः मूल्यांकन किया जाये तथा आज के परिप्रेक्ष्य में उनकी उपयोगिता समझी जाये। सा. हत्यसमाज का दर्पण होता है। समाज परिवर्तनशील है। निरंतर परिवर्तन उसका क्रम है। प्राचीन साहित्य आज के काल का निरूपण नहीं कर सकता उसका कारण है, सामाजिक मूल्यों में परिवर्तन। अतः आज आवश्यकता है प्राचीन तथ्यों के समीक्षात्मक अध्ययन की। जिससे उन प्राचीन धारणाओं में हम शोध कर उन्हें अपने लिए उपयोगी बना सकें।